गांधी और उनका राष्ट्रवादी दृष्टिकोण

सचिन कुमार
शोध छात्र
इतिहास विभाग,
चौ० चरण सिंह विष्वविद्यालय, मेरठ

धीरेन्द्र कुमार
शोध छात्र
राजनीति विज्ञान विभाग,
इस्माईल नेशनल महिला (पी0जी0) कॉलिज, मेरठ
dherander.k12@gmail.com

डॉ० शिवाली अग्रवाल
एसो0 प्रोफे0, राजनीति विज्ञान विभाग, इस्माईल नेशनल महिला पी०जी० कॉलिज
मेरठ, उत्तर प्रदेश
drshivali09@gmail.com

सारांश

राष्ट्रवाद एक आधुनिक विचार है जिसका उदय 18वीं शताब्दी में हुआ। इसी समय राज्य नाम की अवधारणा का विकास हुआ तथा राजनीतिक रूप से अपनी एक अलग पहचान स्थापित की। राष्ट्रवाद के उदय के फलस्वरूप राजनीतिक सरोकारों का केन्द्र बिन्दु राज्य ने निहित हो गया। धीरे–धीरे इस विचार ने अपनी एक व्यापक पहचान स्थापित की। विश्व स्तर पर राष्ट्रवाद के प्रचार–प्रसार से गैर–आधुनिक समाजों को यूरोपीयकरण तथा आधुनिकीकरण हुआ। इसके उदय के साथ अनेक नये सिद्धांतों का उदय हुआ जैसे–संप्रभुता की उत्पत्ति, शसितों के सक्रिय सहयोग से शासन का सिद्धांत, धर्मनिपेक्षता, धार्मिक या जातीय सामाजिक मानसिकता का विघटन।[1] साथ ही साथ शहरीकरण, औद्योगिकीकरण तथा संचार सेवाओं का प्रचार–प्रसार।

प्रस्तावना

गांधी ने राष्ट्रवाद पर अलग से अपना कोई मौलिक विचार प्रस्तुत नहीं किया। गांधी के विचारों में राष्ट्रवाद को समझने के लिए उनकी विचारधारा और सम्पूर्ण दर्शन का अध्ययन करना जरूरी है। उनके लिए राष्ट्रवाद भारत की आजादी हेतु निहित संघर्षों में गौर करना होगा कि गांधी के हदय में राष्ट्रवाद नामक पौधे का प्रस्फुटन भारत में नही बल्कि दक्षिण अफ्रीका में हुआ। और तथ्य अकेले ही अन्य भारतीय राष्ट्रवादवादियों से अलग करती हैं। दूसरा, चम्पारण या बारदोली के बजाय ट्रांसवाल की राजनीतिक पृष्ठभूमि पर गांधी ने अपने अद्भुत व अनुपम राजनीतिक दर्शन, तौर–तरीकों का विकास किया। गांधी ने कही एक जगह राश्ट्रवाद के बारे में कोई ठोस विचार नहीं दिया है, इसलिए गांधी के दृष्टिकोण में राष्ट्रवाद को समझने के लिए सम्पूर्ण गांधी साहित्य का अध्ययन करना जरूरी है। गांधी के रचनाक्रमों के अध्ययन के फलस्वरूप कुछ तथ्य उभरकर सामने आये हैं।[2]

गांधी का राष्ट्रवाद 'समायोजन' पर आधारित था, जिसमें भारत के विभिन्न समुदायों का राष्ट्रवादी समरसता कायम करना शामिल था। उनकी राष्ट्रवादी अवधारणा में न केवल धार्मिक समूह बल्कि जातियां और प्रजातियां भी शामिल थी। इस पर रविन्द्र कुमार ने टिप्पणी की है कि चूंकि गांधी के मानस में भारत की वास्तविक तस्वीर वर्गों, जातियों, समुदायों तथा धार्मिक समूहों के एक स्वच्छन्द घनीभूत के रूप में थी, सो वे इस उपमहाद्वीप के जनमानस में राष्ट्रीय भावना भरने में जितना समर्थ थे उतना इनके पूर्व न कोई था और न बाद में हुआ।

ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंकने के अपने कार्यक्रम में वे सभी जातियों, वर्गों, समुदायों, धर्मालंबियों को एक मंच पर लाये तथा अपने साझे राष्ट्रवाद की भावना से प्रेरित कर लक्ष्य को प्राप्ति के लिए प्रेरित किया। यह काम उन्होंने सारे समूहों को साथ लेकर किया। साथ ही उनका प्रयास था कि विभिन्न मत भिन्नताओं और विभिन्न विचारों वालों को भी जागष्त कर एक मंच पर लाया जायें।[3]

गांधी का राष्ट्रवाद औपनिवेशिक सत्ता से प्रेरित था लेकिन उनके तौर–तरीके यूरोपीय देशों से कई मायनों में अलग थे। उन्होंने वैसे राष्ट्रवाद को दरकिनार कर दिया जो हिंसा पर आधारित हो जैसा कि यूरोपीय देशों में देखने को मिलता है। वे अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अहिंसा का उपयोग करना चाहते थे, उनका मानना था कि 'प्रेम या आत्मा की ताकत के आगे हथियारों की ताकत निरीह व निष्प्रभावी है। उनका मानना है कि हिंसा से आपसी संवाद खत्म होते है और समाज में हिंसक प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है। उनका विचार था कि भारतीयों को ब्रिटिश सरकार की गलतियों का एहसास मिलता है। उनका विचार था कि भारतीयों को ब्रिटिश सरकार की गलतियों का बढ़ावा मिलता है। उनका विचार था कि भारतीयों को ब्रिटिश गलतियों का एहसास दिलाना चाहिए तथा सत्याग्रह द्वारा अपने आपको बदलने की कोशिश करनी चाहिएं। उनकी नजरों में राष्ट्र की मुक्ति के लिए हिंसा का कोई स्थान न था।

उनका राष्ट्रवाद समाज के सभी तबको के साथ बिना किसी भेदभाव के सामूहिक सोच व लक्ष्य की अभिव्यक्ति थी। वे जाति या वर्ग के आधार पर पृथकतावादी दृष्टिकोण के खिलाफ थे। उन्होंने जातीय ऊंच–नीच के खिलाफ हमेशा आवाज उठायी और भारत से छुआछूत मिटाने का अथक व गंभीर प्रयास किया वे हमेशा से एक ऐसे राष्ट्रवाद के पक्षधर थे जो विभिन्न वर्गो–समुदायों तथा बहुलतावादी संस्कृति पर आधारित हो। भारत से छूआछूत को हटाने के लिए उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में काफी परिवर्तन किये। दक्षिण अफीका में भी गांधी के सहयोगियों में सभी जातियों व समुदायों के लोग शामिल थे। 1915 में भारत लौटने पर अहमदाबाद में स्थापित पहले आश्रम मे उन्होंने लाख विरोध के बावजूद अछूत व्यापारियों को आमंत्रित किया।[4] उन्होंने अछूतों को 'हरिजन' नाम दिया और फिर इसी नाम से उन्होंने साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया। यह पत्रिका समाज के निचले तबकों की समस्याओं पर केंद्रित थी। 1932 में जेल से छूटने के बाद छुआछूत को मिटाने के लिए उन्होंने 12,500 मील की यात्रा पैदल की। उन्होंने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए हरिजन कोश' की स्थापना की। गांधी का मानना था कि ब्रिटिश सरकार इसी जात–पात के आधार पर लोगों को बांटकर शोषण कर रही

है। जैसा कि 1909 को एक्ट से हिन्दू–मुस्लिम के बीच खाई पैदा की थी। अतः भारत की एकता और अखंडता को बनाए रखने के लिए गांधी ने ब्रिटिश सरकार के सारे कपटपूर्ण नीतियों को कमजोर करने की कोशिश की जिससे भारतीय राष्ट्रवाद कमजोर हो सकता था।

गांधी का राष्ट्रवाद धर्म से प्रेरित होने के बावजूद पंथनिरपेक्ष प्रकृति वाला था। यद्यपि गांधी की नजरों में भारत विभिन्न धर्मों, पंथों तथा जातियों का देश था। फिर भी जब कभी भी संश्लेषण विश्लेषण व पारस्परिक अस्तित्व की बात आयी तो अनजाने ही वे हिंदुत्व की तरफ झुके नजर आये। गांधी द्वारा बार–बार धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक था, वे धर्म में मिले तमाम रूढ़ियों, रिवाजों और अंधविश्वासों को तोड़ना चाहते थे। वे धर्म को व्यक्तिगत मानते थे जहाँ लोग अपने दैनिक जीवन के क्रियाकलापों की शुद्धता पर ध्यान देते हो।[5] इसी प्रकार राष्ट्र के संदर्भ में भी उनकी प्रवृत्ति धर्मनिरपेक्ष थी। गांधी के धार्मिक विचारों के संदर्भ में कुछ विद्वानों ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये। एम०एन० राय प्रारंभ में गांधी द्वारा 'राजनीतिक व धर्म के घालमेल' के कट्टर आलोचक थे लेकिन बाद में उन्होंने समझा कि गांधी के धार्मिक विचारों की जड़ नैतिक, मानवतावादी तथा वैश्विक थी तथा उनमें किसी व्यक्ति,पंथ, धर्म, समाज या राष्ट्र के प्रति मन में लेशमात्र भी दुराग्रह नहीं था। गांधी द्वारा हिन्द स्वराज लिखे जाने के समय यह बात बहस का मुद्दा थी कि भारत की राष्ट्र के रूप में स्थापना धार्मिक आधार पर संभव है या नहीं। इस किताब में उन्होंने राष्ट्र शब्द के लिए प्रजा शब्द का इस्तेमाल किया। उनका विश्वास था कि प्रजा नामक शब्द से भारत में एक साझे संस्कृति का निर्माण होगा। उन्होंने हिन्द स्वराज्य में 'प्रजा' पर आधारित उदार राष्ट्रवाद को अपनाने पर बल दिया।[6] उन्होंने लोगों का आह्वान किया और धर्म को धर्मांधता की बुराई से मुक्त कराने और प्रेम तथा आध्यात्म पर आधारित धर्म पर जोर दिया तथा उन्होंने बताया कि सभी धर्मों को एक–दूसरे के प्रति सहनशीलता व सम्मान अपनाना चाहिए। यद्यपि गांधी का झुकाव हिंदुत्व के प्रति था पर उनका दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक था। इसमें कोई शक नहीं कि गांधी धर्म–निरपेक्ष तथा धार्मिक आदर्शों के प्रति समर्पित ही नहीं बल्कि इसको अपनाने में अग्रदूत की भूमिका निभाई। वे साम्प्रदायिक मतभेदों को आपसी मेल–जोल के साथ हल करना चाहते थे, जिसमें समुदायों की भागीदारी अनिवार्य थी। वे एक ऐसे राष्ट्रवाद का निर्माण करना चाहते थे जिसकी बुनियाद सद्भावना, सहअस्तित्व तथा समन्वय पर आधारित थी न कि समावेषीकरण, सम्मिश्रण तथा संयोजन पर। कुछ विद्धानों का मत यहाँ तक है कि अंतिम दिनों में उनका धार्मिक बहुलतावाद की सीमा 'बहुल'हिन्दुत्व से आगे जाकर बहुधर्मी तानों–बानों में गुंथ गई थी तथा उनके धार्मिक विचारों व दर्शन का स्वरूप पूर्णतः वैश्विक हो गया था।[7]

गांधीवादीराष्ट्रवाद में अन्तर्राष्ट्रीयतावादी पुट था। उनका मानना था कि दोनों का सह–अस्तित्व मुमकिन है। इसका कारण था कि वे राष्ट्र को एक–दूसरे से पृथक मानते थे। उनके अनुसार राष्ट्र ऐसे व्यक्तियों का अर्थपूर्ण सम्मिलित स्वरूप है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी अंतः शक्तियों से परिचालित होकर एक साझे लक्ष्य को पाने के लिए प्रयत्नशील रहता है। पर राज्य एक मशीनी व्यवस्था है जो राष्ट्र पर थोप दी जाती है। गांधी की नजरों में राष्ट्र रचनात्मकता और जीवंतता का एक रूप है तो राज्य रूढ़ियों और परंपराओं का एक आदर्श रूप।

गांधी इस बात को सुनिश्चित करना चाहते थे कि राष्ट्र के सामाजिक सरोकरों पर राज्य के काले बादल न छा जाएं। वे इस बात से डरते थे कि राष्ट्र का भाग्य तथाकथित नियंत्रक के रूप में राज्य द्वारा निष्क्रिय न कर दिया जाये। यद्यपि गांधी ने जिन्ना जैसे प्रतिक्रियावादियों द्वारा बाध्य किये जाने के अपवाद के अलावा 'राष्ट्र' शब्द का इस्तेमाल विरले ही किया। यहाँ पर उन्होंने इस बात का भी जिक्र किया कि भारत सिर्फ कुछ समुदायों क बहुरंगा समूह नहीं है वरन् यह एक ऐसा राष्ट्र है जहाँ लोगों की आकांक्षाएँ व आशाएं साझे हित से प्रेरित हैं तथा जिसकी प्रतिबद्धता एक आध्यमिक सभ्यता की खोज व निर्माण की विकास है। इस संदर्भ में भीखू पारिख' काकथन उल्लेखनीय है कि उन्होंने राष्ट्रवाद शब्द का प्रयोग देश प्रेम के रूप में किया। अधिकतर जगहों पर उन्होंने सामूहिक गौरव, पैतृक निष्ठा, पारस्परिक उत्तरदायित्व तथा बौद्धिक व नैतिक खुलेपन को अधिक बेहतर व अनुकूल माना।[8] अतः राष्ट्रवाद के विचार को अंतर्राष्ट्रीयवाद के पूरक के रूप में समझा जा सकता है। जैसे की उन्होंने खुद कहा–किसी के लिए यह असम्भव है कि वह राश्ट्रवादी बने बिना अंतर्राष्ट्रीयवादी बन जाये। राष्ट्रवाद को संकीर्णता, स्वार्थपरता तथा विशिष्टता के चश्में से देखना पाप है तथा आधुनिक राष्ट्रवाद की अवधारणा पर यह कलंक है। आधुनिकता की इस चकाचौंध में प्रत्येक व्यक्ति एक–दूसरे को पछाड़कर या गिराकर आगे बढ़ना चाहता है। भारतीय राष्ट्रवाद इन सबसे भिन्न और अलग मार्ग प्रशस्त करता है। यह अपने आपको इस ढंग से परिपूर्ण करना चाहता है जो सम्पूर्ण मानवता के पक्ष में खड़ा हो सके।[9]

गांधी समुदायवादी रूख के अलावा बहुलता व सम्मिश्रण सरोकारों मे अधिक विश्वास रखते थे। यह बात उस समय और अधिक स्पश्ट हुई जब जिन्ना ने मुस्लिम साम्प्रदायिकता के आधार पर अलग राष्ट्र की मांग की तो इस पर गांधी का विचार था कि यूरोपीय राष्ट्रों की तरह भारत की राष्ट्रीयता को परिभाषित करना उचित नहीं है वे भारत को एक ऐसी सभ्यता का देश मानते थे जहां विभिन्न सम्प्रदाय, जाति व समुदाय के लोग आपसी समझ व सहनशीलता के साथ वर्षों से रहते आ रहे हैं। यह समुदायों का एक ऐसा समुदाय है जहाँ प्रत्येक अपने कर्म, विचार व दर्शन के लिए स्वतंत्र है पर प्रत्येक का भाग्य एक साझे संस्कृति पर आधारित है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भारतीय मुस्लिम सिर्फ क्षेत्रीय दायरे में ही भारतीय नहीं हैं, बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी वे पूर्णतः भारतीय है, यद्यपि अन्य समुदायों की तरह उनका अपने विशिष्ट रीति–रिवाज हो सकते है। पर वे राष्ट्र के भीतर किसी तरह से शांन्ति या सहअस्तित्व में बाधक नहीं हैं।[10] उनकी नजर में भारत ही एक ऐसी हस्ती थी जिसकी सामाजिक व सांस्कृतिक विशिष्टताएं पूरे भारत में एक समान थी। तब विभिन्न समुदायों के बजाय सभ्यता की बात करते हुए गांधी ने एक ऐसे भारतीय राष्ट्रवाद के निर्माण की कोशिश की जिसकी बुनियाद बहुलता तथा समरसता पर आधारित हो, जो विविधताओं व विभिन्नताओं का न केवल सम्मान करता हो बल्कि उसके प्रति उत्साह, उंमग और जीवंतता भी रखता हो। वे एक ऐसे वातावरण की रचना करना चाहते थे जहाँ संस्कृतियों व समुदायों में आपसी मेल–जोल हो। इस प्रकार गांधी का राष्ट्रवाद मानवतावाद पर आधारित था। चूंकि गांधी समुदाय को व्यक्तियों का समूह मानते थे, और उनकी नजर में आपसी झगड़ो का निपटारा उसी तरह होना चाहिए जैसे परिवार के सदस्यों के बीच होता है।[11] स्वास्थ्य व सफाई, राष्ट्रभाषा, मातृभाषा के प्रति प्रेम तथा ट्रस्टीशिप के द्वारा आर्थिक

समानता का प्रचार–प्रसार। लेकिन सलीनियस का यह मत है कि उपरोक्त कार्यक्रमों में केवल तीन हिन्दू–मुस्लिम एकता, छुआछूत उन्मूलन तथा खादी कार्यक्रम को व्यापक जनसमर्थन मिला। खिलाफत आंदोलन के समय गांधी के प्रयासों से ही हिन्दू–मुस्लिम एकता परवान चढ़ी।

खादी कार्यक्रम और छुआछूत कार्यक्रम मिशन के तौर पर चलाया गया। यद्यपि हिन्दू–मुस्लिम एकता को देश विभाजन से पूर्व भारतीय स्वतंत्रता के अंतिम दिनों में फिर से जिंदा किया गया। लेकिन सवाल उठता है कि क्या गांधी ने इसे जनआंदोलन का रूप दिया? इस पर विवाद हैं। पर एक बात स्पष्ट है कि राष्ट्रवादी संघर्ष का अंतिम काल गांधीवादी विचारधारा की गिरफ्त में था। गांधीवादी राष्ट्रवाद एक व्यापक फलक का राष्ट्रवाद था जो संकुचित व साम्प्रदायिक दृष्टि से परे और सभी जातियों, दबे–कुचले व समाज के पिछड़े तबकों को एक समान धरातल पर लाने की बात करता है। यह राष्ट्रवाद सामाजिक और आर्थिक खाईयों को पाटना चाहता था। धर्म–निरपेक्षता के प्रति उनके विचार पर विवाद की संभावना है।[12] फिर भी धर्म आधारित संकुचित विचारों से वे परे रहे है। उन्होंने धर्म को न केवल व्यक्तिगत दृष्टि से देखा बल्कि सांगठिनक स्तर पर भी गहरी पड़ताल की और साथ ही धर्म को काल्पनिक व वास्तविक तत्वों के बीच स्पष्ट सीमा रेखा निर्धारित की। यह सर्वविदित है कि वे हिन्दू धर्म से काफी प्रभावित थे पर किसी भी मायने में उनमें हठधर्मिता नाम की चीज देखने को नहीं मिलती। वे हिन्दू–मुस्लिम दोनों को समतामूलक दृष्टि से देखते थे। गांधी रूढ़िवादी राष्ट्रवादी नहीं थे बल्कि उनकी विचारधारा अंतर्राष्ट्रीयता से अधिक प्रेरित थी। उनका राष्ट्रवाद मानवता पर आधारित था। उन्होंने साम्यवादी राष्ट्रवाद को स्वीकार नहीं किया इसके बजाय वे लोक मानवतावाद के पक्षधर थे चूंकि भारतीय राष्ट्रवाद औपनिवेशिक विरोधी संघर्ष से प्रभावित था। गांधी ने राष्ट्रवाद की इस अनुभूति को जन आंदोलन का रूप प्रदान किया। विशाल जनमानस को एक मंच पर लाने के लिए अहिंसक आंदोलनों का सहारा लिया तथा खुद भी उस जीवन को जीया। राष्ट्रीय एकता और अखंडता को कायम रखने के लिए बहुत सारे रचनात्मक कार्यक्रम लोगों के सामने रखे। अतः गांधीवादी राष्ट्रवाद को समझने के लिए यह जरूरी है कि उनके विचारों और दर्शनों को समझें।[13] वे अपने राष्ट्रवाद के द्वारा न सिर्फ भारत की स्वतंत्रता चाहते थे बल्कि एकता और अखंडता को भी अक्षुण्ण रखना चाहते थे।

अंत में यह कहा जा सकता है कि गांधी ने राष्ट्रवाद की व्याख्या भारतीय सभ्यता के व्यापक संदर्भों में की थी न कि संकीर्ण राष्ट्रवाद के परिप्रेक्ष्य में और इससे भी अधिक उनका राष्ट्रवाद भारतीय स्वतंत्रता की आत्मा में था और इसी आत्मा कोपाने के लिए कहीं–कहीं उनके विचारों में बदलाव दिखता है।

सन्दर्भ

1. हैंस कोन : नेशनलिज्म, इटंरनेशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइन्सेस, शिकागों, 1976,Vol-II
2. आर०एस० यादव : *गांधीयन परस्पेक्टिव ऑन इंडियन नेशनलिज्म,* जर्नल ऑफ गांधीयन स्टडीज, 2005, Vol-III, पेज न० **10–15**

3. एथोनी जे० परेल : *गांधी हिन्द स्वराज एण्ड अदर राइटिंग्स,* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1997, पेज न०**–21**
4. डेविड हार्डिमैन : *गांधी इन हिज टाइम एण्ड आवर्स,* नई दिल्ली, 2003, पेज न०–**21**
5. वहीं, पेज न०–**37**
6. कनक तिवारी : *हिन्द स्वराज,* सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, 2010, पेज न०–**290**
7. वहीं, पेज न०–**292**
8. भीखू पारिख : *गांधीज पालिटिकल फिलॉस्पी,* दिल्ली, 1995, पेज न०–**189**
9. उपरोक्त सं० 2, पेज न०–**16**
10. *एम०के गांधी : इंडिया ऑफ माई ड्रीम,* नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2003, पेज न०–**11**
11. वही, पेज न०–**14**
12. *एम०के० गांधी : कन्सट्रक्टिव प्रोग्राम : इट्स मिनिंग एण्ड प्लेस,* नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1941, पेज न०–**167**
13. उपरोक्त सं–3, पेज न०–**23**